नईदुनिया

संपादकीय

खतरनाक है कांग्रेस का 'सन्नाटा'

विभीषण घर में है या दिग्गजों की मौन सहमति से डूबी नाव

मंदसौर की धरती से निकलीं मीनाक्षी नटराजन की राज्यसभा चुनाव में हार केवल एक सीट का गणित नहीं, बल्कि कांग्रेस की आंतरिक स्थिति पर गंभीर सवाल खड़े करती है। चर्चा हार की हो रही है, लेकिन उस रहस्यमयी चुप्पी पर कोई सवाल नहीं उठा रहा जिसने नामांकन को नामंजूरी तक पहुंचा दिया। कमलनाथ दिल्ली से दूर रहे, दिग्विजय सिंह की ओर से भी कोई सक्रियता नजर नहीं आई। उधर, पार्टी का एक वरिष्ठ नेता कुछ समय पहले सत्ताधारी दल के शीर्ष नेतृत्व और एक संवैधानिक पद पर आसीन माननीय से मुलाकात कर चुका था। ऐसे में सवाल उठना स्वाभाविक है कि यह रणनीतिक चूक थी या प्रायोजित हादसा।

बताया गया कि मीनाक्षी नटराजन का नामांकन प्रस्तावकों के हस्ताक्षर और शपथ पत्र संबंधी तकनीकी कमियों के कारण निरस्त हुआ। लेकिन राजनीति में तकनीकी भूल तब ही सामने आती है जब तैयारी और नीयत दोनों कमजोर हों। राज्यसभा जैसे महत्वपूर्ण चुनाव में कांग्रेस के विधि विशेषज्ञों ने दस्तावेजों की पूर्व जांच क्यों नहीं की? पार्टी में कई वरिष्ठ कानूनी दिग्गज मौजूद होने के बावजूद इतनी बुनियादी त्रुटियां कैसे रह गईं? यह सवाल स्वाभाविक रूप से उठ रहे हैं।

जब नामांकन दाखिल किया जा रहा था, तब भोपाल से दिल्ली तक सन्नाटा क्यों था? 2019 की लोकसभा हार के बाद मीनाक्षी नटराजन को राज्यसभा भेजने की चर्चा पार्टी के भीतर रही, फिर अंतिम समय में उन्हें अकेला क्यों छोड़ दिया गया? इसी बीच एक वरिष्ठ नेता की सत्तापक्ष से मुलाकात और उसके बाद उठी राजनीतिक चर्चाओं ने संदेह को और गहरा कर दिया है।

कांग्रेस में भीतरघात कोई नई बात नहीं है। पहले भी दल-बदल और आंतरिक असंतोष के कारण पार्टी को भारी नुकसान उठाना पड़ा है। लेकिन इस मामले में लड़ाई नहीं, बल्कि समर्पण जैसा माहौल दिखाई देता है। वरिष्ठ नेता मौन रहे, कानूनी सहायता समय पर नहीं मिली और अंततः नामांकन ही निरस्त हो गया। यह संगठित चुप्पी हार से अधिक चिंताजनक मानी जा रही है।

अब कांग्रेस चुनाव आयोग का दरवाजा खटखटा रही है, लेकिन कानूनी जानकार मानते हैं कि नामांकन निरस्त होने के बाद राहत की संभावना सीमित होती है। यदि जांच में यह सामने आता है कि त्रुटि पार्टी के अपने स्तर पर हुई, तो राजनीतिक और नैतिक दोनों प्रकार का नुकसान और बढ़ सकता है।

मीनाक्षी नटराजन राहुल गांधी की टीम का प्रमुख चेहरा रही हैं। उनकी हार युवा और महिला कार्यकर्ताओं के बीच भी नकारात्मक संदेश छोड़ सकती है। भाजपा के लिए यह मुद्दा राजनीतिक अवसर बन सकता है, क्योंकि विपक्ष की यह चूक उसी पर भारी पड़ती दिख रही है। आखिरकार सवाल यही है कि कांग्रेस तकनीक से हारी या अपनी ही आंतरिक कमजोरियों और मौन सहमति से। जब तक इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर नहीं मिलेगा, तब तक हर हार के पीछे भीतरघात की आशंका बनी रहेगी और कार्यकर्ताओं का भरोसा लौटाना पार्टी के लिए सबसे बड़ी चुनौती होगा।

आजकल

ओरछा की गलियों से संसद की सीढ़ी तक

महेश केवट क्यों बने भाजपा का निषाद कार्ड

बुंदेलखंड की राजनीति में इन दिनों महेश केवट का नाम चर्चा में है। निवाड़ी की ओरछा नगर परिषद के दो बार पार्षद रहे महेश का राजनीतिक दायरा भले अभी स्थानीय स्तर तक सीमित हो, लेकिन यदि भाजपा उन्हें राज्यसभा भेजती है तो यह बड़ा राजनीतिक संदेश होगा। मध्यप्रदेश के इतिहास में पहली बार केवट, मांझी, मल्लाह, रैकवार और भोई समाज को संसद में सीधा प्रतिनिधित्व मिल सकता है। इससे उत्तरप्रदेश और बिहार तक भाजपा की सामाजिक इंजीनियरिंग को नई दिशा मिलने की संभावना है।

महेश केवट की पत्नी भाजपा प्रत्याशी के रूप में ओरछा नगर परिषद अध्यक्ष का चुनाव हार चुकी हैं, लेकिन यदि पार्टी महेश पर दांव लगाती है तो यह संदेश जाएगा कि भाजपा में अवसर परिवार नहीं, बल्कि कार्यकर्ता को मिलता है। दो बार का पार्षद सीधे राज्यसभा पहुंचे, तो यह बूथ स्तर के कार्यकर्ताओं के लिए भी प्रेरक उदाहरण बन सकता है।

राजनीतिक दृष्टि से असली महत्व मध्यप्रदेश से अधिक उत्तरप्रदेश और बिहार का माना जा रहा है, जहां निषाद समाज प्रभावशाली भूमिका निभाता है। महेश केवट को राज्यसभा भेजकर भाजपा सामाजिक प्रतिनिधित्व का नया संदेश देने के साथ-साथ विपक्ष के अति-पिछड़ा वर्ग समीकरण को चुनौती देने की रणनीति अपना सकती है।

हालांकि इस दांव के अपने जोखिम भी हैं। महेश केवट का जनाधार अभी मुख्यतः ओरछा-निवाड़ी क्षेत्र तक सीमित माना जाता है। प्रदेश के अन्य ओबीसी नेताओं में असंतोष की संभावना भी जताई जा सकती है। उनकी पत्नी की चुनावी हार को भी विरोधी राजनीतिक मुद्दा बना सकते हैं। इसके बावजूद भाजपा इसे हार के बाद भी कार्यकर्ता के सम्मान और संगठन आधारित राजनीति के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत कर सकती है। यदि ऐसा होता है तो यह निर्णय केवल एक राज्यसभा सीट तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि व्यापक राजनीतिक संदेश का माध्यम बन सकता है।

दुनिया भारत को देख रही है, युवा अपनी पहचान चुनें

भारत का युवा आक्रोश नहीं, आत्मनिर्माण का प्रतीक बने

अपूर्व तिवारी

भारत आज दुनिया की सबसे युवा आबादी वाला देश है। यही युवा शक्ति आने वाले वर्षों में भारत को विकसित राष्ट्र बनाने की सबसे बड़ी ताकत है। दुनिया की बड़ी अर्थव्यवस्थाएं, वैश्विक कंपनियां और निवेशक भारत की ओर आशा भरी नजरों से देख रहे हैं। इसके पीछे केवल 140 करोड़ की आबादी नहीं, बल्कि करोड़ों ऊर्जावान, शिक्षित और मेहनती युवाओं की क्षमता है। ऐसे समय में यह आवश्यक है कि भारत की पहचान एक नवाचार करने वाले, परिश्रमी और उद्यमी युवा राष्ट्र के रूप में बने, न कि केवल आक्रोश और आंदोलनों की तस्वीरों से।

दुर्भाग्य से सोशल मीडिया के इस दौर में कुछ घटनाएं और कुछ समूह पूरे देश की छवि पर भारी पड़ जाते हैं। देश के करोड़ों युवा अपने कॉलेजों, विश्वविद्यालयों, प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप, उद्योगों, खेतों और दफ्तरों में दिन-रात मेहनत कर रहे हैं, लेकिन सुर्खियां अक्सर उन तस्वीरों को मिलती हैं जिनमें प्रदर्शन और टकराव दिखाई देता है। यह समझना जरूरी है कि ऐसे सीमित समूह पूरे भारतीय युवा वर्ग का प्रतिनिधित्व नहीं करते। भारत का वास्तविक युवा अपने परिवार के सपनों, अपने करियर और देश के विकास के लिए समर्पित है।

लोकतंत्र में अपनी बात रखना हर नागरिक का अधिकार है। असहमति भी लोकतंत्र की शक्ति है, लेकिन हर आंदोलन तभी सार्थक होता है जब उसके साथ व्यवहारिक समाधान और रचनात्मक सोच भी जुड़ी हो। केवल विरोध, नारे और उत्तेजना से न तो रोजगार पैदा होते हैं और न ही विकास की नई राह बनती है। इतिहास गवाह है कि जिन देशों ने अपनी युवा शक्ति को शिक्षा, अनुसंधान, उद्योग और नवाचार में लगाया, वही विश्व नेतृत्व तक पहुंचे।

आज भारत दुनिया के सबसे बड़े निवेश केंद्रों में तेजी से उभर रहा है। विदेशी और घरेलू कंपनियां यहां उद्योग स्थापित कर रही हैं, क्योंकि उन्हें भारत की स्थिर अर्थव्यवस्था और युवा प्रतिभा पर भरोसा है। लेकिन यदि लगातार देश की तस्वीर अशांत और टकरावपूर्ण दिखाई जाए तो इसका असर निवेशकों के विश्वास पर भी पड़ सकता है। निवेश कम होगा तो नए उद्योगों की गति धीमी होगी और रोजगार के अवसर भी प्रभावित होंगे। इसलिए यह समझना जरूरी है कि राष्ट्र की सकारात्मक छवि केवल सरकार की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि हर नागरिक की भी जिम्मेदारी है।

बेरोजगारी निश्चित रूप से एक चुनौती है और इस पर निरंतर काम करने की आवश्यकता है। सरकार कौशल विकास, स्टार्टअप, मेक इन इंडिया, डिजिटल इंडिया और बुनियादी ढांचे के विस्तार जैसे अनेक प्रयासों के माध्यम से रोजगार के अवसर बढ़ाने की दिशा में काम कर रही है। लेकिन बदलती दुनिया में केवल डिग्री पर्याप्त नहीं है। आज कौशल, तकनीकी ज्ञान, नवाचार और उद्यमिता सफलता की नई कुंजी बन चुके हैं। हर युवा को यह समझना होगा कि अवसर का लाभ उठाने के लिए स्वयं पहल करनी पड़ती है। कोई भी व्यवस्था किसी व्यक्ति के घर जाकर उसके हाथ में सफलता नहीं सौंप सकती। मेहनत, निरंतर सीखने की इच्छा और जोखिम उठाने का साहस ही भविष्य का रास्ता बनाते हैं।

प्रतियोगी परीक्षाओं को लेकर भी समय-समय पर विवाद सामने आते रहे हैं। यह स्वीकार करना होगा कि दुनिया की सबसे आधुनिक व्यवस्थाओं में भी कभी-कभी कमियां रह जाती हैं। जहां मानवीय हस्तक्षेप होगा, वहां किसी कमजोर कड़ी का दुरुपयोग करने की संभावना पूरी तरह समाप्त नहीं की जा सकती। लेकिन किसी भी व्यवस्था की मजबूती इस बात में होती है कि गलती सामने आने पर उसे सुधारा जाए और भविष्य के लिए प्रणाली को अधिक सुरक्षित बनाया जाए। इसी दिशा में परीक्षा प्रणाली को अधिक पारदर्शी और तकनीक आधारित बनाने के प्रयास लगातार किए जा रहे हैं।

यह सही है कि परीक्षा दोबारा होने से मेहनती छात्रों को मानसिक और आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उनका समय और ऊर्जा प्रभावित होती है। लेकिन यदि किसी अपात्र अभ्यर्थी को गलत तरीके से सफलता मिल जाए और योग्य छात्र पीछे रह जाएं तो यह पूरे समाज के साथ अन्याय होगा। ऐसे में पुनर्परीक्षा के माध्यम से व्यवस्था की त्रुटि को सुधारना और भविष्य के लिए अधिक मजबूत परीक्षा प्रणाली विकसित करना एक आवश्यक कदम माना जा सकता है। युवाओं की असुविधा को कम करना भी जरूरी है और व्यवस्था को निष्पक्ष बनाना भी उतना ही आवश्यक है।

आज भारत का युवा पहले से कहीं अधिक जागरूक है। वह विश्व की बदलती अर्थव्यवस्था को समझता है और यह भी जानता है कि आने वाला समय ज्ञान, तकनीक और नवाचार का है। इसलिए उसे अपनी ऊर्जा को केवल क्षणिक आक्रोश में खर्च करने के बजाय शिक्षा, अनुसंधान, स्टार्टअप, स्वरोजगार और कौशल विकास में लगाना चाहिए। यही वह रास्ता है जो व्यक्तिगत सफलता के साथ-साथ राष्ट्र को भी नई ऊंचाइयों तक पहुंचाएगा।

हमारे माता-पिता अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा इसलिए दिलाते हैं कि वे आत्मनिर्भर बनें, परिवार का सहारा बनें और समाज के लिए प्रेरणा बनें। भारतीय संस्कृति भी कर्म, अनुशासन और जिम्मेदारी को सर्वोच्च मानती है। देश को ऐसे युवाओं की जरूरत है जो रोजगार मांगने के साथ-साथ रोजगार देने वाले बनें, जो नए उद्योग स्थापित करें, नई तकनीक विकसित करें और दुनिया के सामने भारत की नई पहचान गढ़ें।

भारत की सबसे बड़ी ताकत उसकी युवा शक्ति है। यदि यह शक्ति सही दिशा में आगे बढ़ेगी तो दुनिया भारत को केवल सबसे बड़ी आबादी वाले देश के रूप में नहीं, बल्कि सबसे बड़ी प्रतिभा और सबसे बड़े अवसर वाले राष्ट्र के रूप में देखेगी। समय की मांग है कि युवा भावनाओं से अधिक विवेक को महत्व दें, विरोध से अधिक समाधान पर विश्वास करें और आक्रोश से अधिक आत्मनिर्माण को अपना लक्ष्य बनाएं। यही रास्ता उन्हें व्यक्तिगत सफलता भी देगा और भारत को विश्व मंच पर और अधिक सम्मान, समृद्धि और नेतृत्व की ऊंचाइयों तक पहुंचाएगा।

पेपर लीक नहीं हुआ का रटारटाया जवाब...

जब एजेंसियां परिभाषा के पीछे छुपें, तो सिस्टम पर भरोसा कैसे बचे

परीक्षा सिर्फ कागज का टुकड़ा नहीं, करोड़ों परिवारों का सपना है। जब एजेंसी 'लीक नहीं हुआ' की जिद पर अड़ी रहेगी, तो छात्रों में यह धारणा मजबूत होगी कि सिस्टम में धांधली है। संसदीय समिति का सवाल सही दिशा में है, लेकिन सवाल पूछने से ज्यादा जरूरी है कि जवाबों के आधार पर सुधार लागू हों।

नीट-यूजी 2024 से शुरू हुआ बवाल 2026 में भी थमा नहीं है। संसदीय समिति ने राष्ट्रीय परीक्षा एजेंसी (एनटीए) से सीधा सवाल किया है कि पेपर लीक की परिभाषा क्या है। सवाल इसलिए उठा क्योंकि एनटीए का दावा लगातार यही रहा कि पेपर लीक नहीं हुआ। समिति के पास 2018 से अब तक आयोजित परीक्षाओं में अनियमितताओं के आरोपों की लंबी फेहरिस्त है, लेकिन एजेंसी हर बार तकनीकी परिभाषा की आड़ में जवाब से बचती नजर आती है। जब लाखों छात्रों का भविष्य दांव पर हो, तब शब्दों का खेल सबसे खतरनाक धांधली बन जाता है।

गैस पेपर बनाम पेपर लीक : परिभाषा का भ्रमजाल-समिति ने एनटीए से स्पष्ट करने को कहा है कि उसकी नजर में पेपर लीक क्या है। एजेंसी का तर्क रहा है कि यदि परीक्षा शुरू होने से पहले प्रश्नपत्र का कोई सुनियोजित प्रसार न हुआ हो, तो उसे लीक नहीं कहा जाएगा। यानी यदि किसी एक सेंटर पर पेपर खुल गया, कुछ छात्रों ने उसे देख लिया और वॉट्सऐप पर उसकी तस्वीरें प्रसारित हो गईं, तो एनटीए उसे 'गैस पेपर' या 'लोकल इंसिडेंट' कहकर खारिज कर देती है।

समिति के सूत्रों के अनुसार एनटीए के अधिकारियों ने बताया कि उनकी प्रणाली में 'गैस पेपर' की कोई औपचारिक परिभाषा ही नहीं है। यह फर्क समझना जरूरी है। आम छात्र के लिए पेपर लीक का मतलब है कि परीक्षा से पहले प्रश्न किसी को भी मिल जाना। इससे मेहनत करने वाले और अनुचित लाभ लेने वाले के बीच समान अवसर समाप्त हो जाता है। लेकिन एजेंसी के लिए लीक तभी है, जब पूरा प्रश्नपत्र सुनियोजित तरीके से बाजार में बेचा जाए। इसी परिभाषा के सहारे 2018 से अब तक दर्जनों मामलों में एनटीए ने गलती मानने से इनकार किया है।

नीट-यूजी 2024 में बिहार, गुजरात और राजस्थान में प्रश्नपत्र के हिस्से परीक्षा से लगभग 45 मिनट पहले टेलीग्राम पर मिलने के आरोप लगे थे। एनटीए ने इसे पेपर लीक मानने के बजाय सेंटर स्तर की गड़बड़ी बताया।

परीक्षा सिर्फ कागज का टुकड़ा नहीं, करोड़ों परिवारों का सपना है। जब एजेंसी 'लीक नहीं हुआ' की जिद पर अड़ी रहेगी, तो छात्रों में यह धारणा मजबूत होगी कि सिस्टम में धांधली है। संसदीय समिति का सवाल सही दिशा में है, लेकिन सवाल पूछने से ज्यादा जरूरी है कि जवाबों के आधार पर सुधार लागू हों।

एजेंसियों का नकारात्मक रुख : गलती नहीं, आर्गुमेंट-संसदीय समिति के सामने सबसे बड़ी चिंता एजेंसियों का रवैया है। गलती स्वीकार कर व्यवस्था सुधारने की जगह हर बार कानूनी और तकनीकी दलीलों का पुलिंदा सामने रख दिया जाता है। समिति ने पूछा कि 2018 से अब तक कितने प्रश्नपत्र लीक हुए। एनटीए का जवाब था—'शून्य'। जबकि इसी अवधि में सीबीआई, ईडी और विभिन्न राज्य पुलिस एजेंसियों ने 11 मामलों में चार्जशीट दाखिल की है।

समस्या सिर्फ एनटीए तक सीमित नहीं है। यूजीसी-नेट, सीयूईटी, सिपाही भर्ती और शिक्षक पात्रता परीक्षा तक में यही पैटर्न दिखाई देता है। पहले इनकार, फिर 'लोकल इंसिडेंट', फिर 'जांच जारी है' और अंत में कुछ निचले स्तर के कर्मचारियों पर कार्रवाई। नीति बनाने वाले, टेंडर देने वाले और सॉफ्टवेयर उपलब्ध कराने वाली निजी कंपनियां अक्सर जवाबदेही से बच जाती हैं।

समिति ने ओएमआर शीट, बायोमेट्रिक हाजिरी और सीसीटीवी फुटेज से जुड़े रिकॉर्ड की खामियों का भी मुद्दा उठाया। एनटीए का जवाब था कि इसके लिए तीसरे पक्ष की एजेंसियां जिम्मेदार हैं।

यह नकारात्मक रुख तीन तरह से नुकसान पहुंचाता है। पहला, छात्रों का मनोबल टूटता है। दूसरा, नकल माफिया का हौसला बढ़ता है क्योंकि उसे पता होता है कि सिस्टम खुद को बचाने में लगा है। तीसरा, ईमानदार अधिकारी भी सुधार का जोखिम नहीं लेते, क्योंकि गलती स्वीकार करने का अर्थ उनके लिए संकट बन सकता है।

लगातार धांधली की जड़ : संरचना में सेंध-पेपर लीक हो या गैस पेपर, असली सवाल यह है कि पांच वर्षों में परीक्षा व्यवस्था इतनी कमजोर क्यों हो गई। इसके पीछे कई कारण हैं।

पहला, आउटसोर्सिंग का मकड़जाल। एनटीए हो या राज्य आयोग, पेपर सेटिंग से लेकर सेंटर प्रबंधन तक का बड़ा हिस्सा निजी कंपनियों को सौंप दिया गया है। एक परीक्षा के लिए करोड़ों रुपये के टेंडर दिए जाते हैं, फिर कंपनियां सब-कॉन्ट्रैक्ट करती हैं और अंततः प्रश्नपत्र की सुरक्षा कमजोर स्तर तक पहुंच जाती है। जवाबदेही बिखर जाती है।

दूसरा, तकनीक पर अंधा भरोसा। डिजिटल लॉकर, एआई प्रॉक्टोरिंग और जैमर जैसी व्यवस्थाएं लागू की गईं, लेकिन नीट-यूजी 2024 में प्रश्नपत्र पेन ड्राइव के जरिए लीक होने के आरोप लगे। तकनीक तभी प्रभावी है, जब उसे संचालित करने वाला व्यक्ति ईमानदार हो।

तीसरा, सजा का अभाव। पब्लिक एग्जामिनेशन (प्रिवेंशन ऑफ अनफेयर मीन्स) एक्ट, 2024 लागू होने के बावजूद बड़े मास्टरमाइंड पर कड़ी कार्रवाई के उदाहरण बहुत कम हैं। जब जोखिम कम और मुनाफा बड़ा हो, तो धांधली को रोकना मुश्किल हो जाता है।

चौथा, राजनीतिक संरक्षण। समिति के एक सदस्य ने नाम न प्रकाशित करने की शर्त पर कहा कि कई मामलों में जांच के तार कोचिंग माफिया और स्थानीय प्रभावशाली लोगों तक पहुंचते हैं, लेकिन कार्रवाई वहीं ठहर जाती है।

रोक कैसे लगेगी : परिभाषा से आगे समाधान-संसदीय समिति ने 10 जून तक एनटीए से जवाब मांगा है, लेकिन केवल जवाबों से स्थिति नहीं बदलेगी। आवश्यकता ठोस सुधारों की है। पेपर लीक की स्पष्ट कानूनी परिभाषा तय होनी चाहिए। यदि परीक्षा शुरू होने से एक मिनट पहले भी कोई प्रश्न बाहर पहुंचता है, तो उसे लीक माना जाना चाहिए। 'गैस पेपर' जैसे शब्दों की कोई जगह आधिकारिक शब्दावली में नहीं होनी चाहिए।

साथ ही, पेपर तैयार करने वाले से लेकर परीक्षा केंद्र के अंतिम कर्मचारी तक जवाबदेही सुनिश्चित होनी चाहिए। तकनीक का उपयोग पारदर्शिता बढ़ाने के लिए हो, न कि जिम्मेदारी टालने के लिए।

परीक्षा केवल कागज का टुकड़ा नहीं, करोड़ों परिवारों के सपनों और युवाओं के भविष्य का आधार है। एजेंसियां भले ही तकनीकी शब्दों के सहारे खुद को बचाने का प्रयास करें, लेकिन जिस छात्र ने वर्षों की मेहनत की हो और किसी गड़बड़ी के कारण उसका भविष्य प्रभावित हो जाए, उसके लिए वह पूर्ण रूप से पेपर लीक ही है। सरकार को समझना होगा कि परिभाषा बदलने से हकीकत नहीं बदलती। जब तक गलती स्वीकार कर तर्कों की जगह कार्रवाई नहीं होगी, तब तक हर नई परीक्षा एक नए विवाद का कारण बनती रहेगी। व्यवस्था में भरोसा तभी लौटेगा, जब जवाबदेही शब्दों में नहीं, परिणामों में दिखाई देगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

टीएमसी का अस्त होता सूर्य, जहाज छोड़ समुद्र में छलांग

चुनाव में पराजय लोकतंत्र का स्वाभाविक हिस्सा है, लेकिन ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस के साथ जो घटनाक्रम सामने आ रहा है, वह सामान्य राजनीतिक हार से कहीं आगे का मामला प्रतीत होता है। एक समय केंद्र सरकार और अदालतों के सामने भी आक्रामक रुख अपनाने वाली ममता बनर्जी आज अपनी ही पार्टी में बढ़ती असंतुष्टि का सामना कर रही हैं। पार्टी नेताओं का विरोध, संगठन में टूट और जनाक्रोश ऐसे संकेत दे रहे हैं कि सत्ता के लंबे दौर के बाद टीएमसी एक बड़े राजनीतिक संकट से गुजर रही है।

बताया जा रहा है कि कई विधायक अलग समूह बनाकर अपनी राजनीतिक राह चुन चुके हैं और विपक्ष के स्वरूप में नई राजनीतिक स्थिति बनने लगी है। संसदीय दल में भी असंतोष और टूट की चर्चाएं तेज हैं। जिस पार्टी को कभी बंगाल की राजनीति का सबसे मजबूत स्तंभ माना जाता था, उसके भीतर इतनी तेजी से पैदा हुई दरारें यह संकेत देती हैं कि समस्या केवल चुनावी हार की नहीं, बल्कि संगठनात्मक कमजोरी की भी है।

सबसे बड़ा प्रश्न उन बुद्धिजीवियों और राजनीतिक विश्लेषकों पर भी उठता है, जिन्होंने लंबे समय तक बंगाल के शासन मॉडल की आलोचना करने के बजाय उसे वैकल्पिक राजनीति का उदाहरण बताया। यदि राज्य में भ्रष्टाचार, कटमनी, हिंसा और प्रशासनिक अव्यवस्था जैसी शिकायतें इतनी व्यापक थीं तो उन पर गंभीर विमर्श पहले क्यों नहीं हुआ? चुनाव परिणामों के बाद सामने आ रहे जनाक्रोश ने इस बहस को और तेज कर दिया है।

सरकारें बदलती रहती हैं, लेकिन सत्ता से बाहर हुए नेताओं के प्रति जिस प्रकार का व्यवहार बंगाल में देखने को मिल रहा है, वह असामान्य है। कई स्थानों पर टीएमसी नेताओं के विरोध, उन पर हमले और जनता के गुस्से की खबरें सामने आई हैं। यदि यह जनभावना वास्तविक है तो यह इस बात का संकेत है कि शासन और जनता के बीच विश्वास का संकट काफी गहरा हो चुका था।

ममता बनर्जी की व्यक्तिगत छवि हमेशा एक संघर्षशील और सादगीपूर्ण नेता की रही है। साधारण जीवनशैली, सफेद साड़ी और चप्पल उनकी पहचान रही है। लेकिन लोकतंत्र में केवल व्यक्तिगत छवि पर्याप्त नहीं होती।

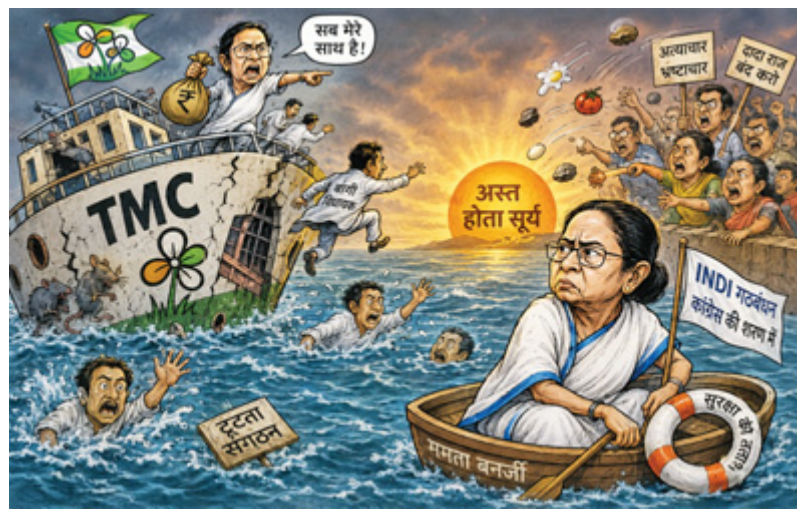

जनता अंततः शासन, प्रशासन और व्यवस्था के आधार पर निर्णय करती है। यदि संगठन के भीतर जवाबदेही समाप्त हो जाए और सत्ता का केंद्रीकरण बढ़ जाए तो उसका असर चुनावी राजनीति पर भी दिखाई देता है।

नई सरकार के सामने भी बड़ी चुनौतियां हैं। कानून-व्यवस्था बहाल करना, प्रशासनिक विश्वास लौटाना और राजनीतिक प्रतिशोध की भावना से बचते हुए लोकतांत्रिक वातावरण बनाए रखना उसकी जिम्मेदारी होगी। जनाक्रोश अपनी जगह है, लेकिन संवैधानिक व्यवस्था को मजबूत बनाए रखना किसी भी सरकार का पहला दायित्व होता है।

पश्चिम बंगाल एक सीमावर्ती राज्य है, इसलिए राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े मुद्दे भी हमेशा महत्वपूर्ण रहे हैं। घुसपैठ, तुष्टिकरण और जनसांख्यिकीय बदलाव जैसे विषयों पर लंबे समय से राजनीतिक बहस होती रही है। इन मुद्दों पर सरकार की नीतियों को लेकर उठे सवालों ने भी जनता के एक वर्ग को प्रभावित किया है। यही कारण है कि सत्ता परिवर्तन के बाद इन विषयों पर चर्चा और अधिक तेज हो गई है।

टीएमसी में बढ़ती बगावत और नेतृत्व को लेकर उठ रहे सवाल यह भी बताते हैं कि किसी भी राजनीतिक दल में आंतरिक लोकतंत्र कितना आवश्यक है। जब निर्णय सीमित लोगों तक सिमट जाते हैं और संगठन की व्यापक भागीदारी कम हो जाती है, तब असंतोष धीरे-धीरे विद्रोह का रूप ले सकता है। यही स्थिति आज टीएमसी के सामने दिखाई दे रही है।

यह घटनाक्रम केवल एक दल की कहानी नहीं है, बल्कि सभी राजनीतिक दलों के लिए एक संदेश भी है। सत्ता स्थायी नहीं होती और जनता का विश्वास बनाए रखने के लिए सुशासन, पारदर्शिता और संगठनात्मक अनुशासन आवश्यक हैं। व्यक्तिवाद और तानाशाही की प्रवृत्ति कुछ समय तक सफलता दिला सकती है, लेकिन अंततः लोकतंत्र में जनता ही अंतिम निर्णायक होती है।

ममता बनर्जी और टीएमसी की वर्तमान स्थिति राजनीतिक विश्लेषकों और बुद्धिजीवियों की भूमिका पर भी प्रश्नचिह्न लगाती है। यदि सत्ता के भय या वैचारिक आग्रह के कारण वास्तविक समस्याओं की अनदेखी की जाती है तो लोकतांत्रिक विमर्श कमजोर पड़ता है। किसी भी सरकार का निष्पक्ष मूल्यांकन ही स्वस्थ लोकतंत्र की पहचान है। बंगाल का यह घटनाक्रम बताता है कि जनादेश का सम्मान केवल चुनाव जीतने तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि शासन के प्रत्येक निर्णय में जनता का विश्वास सर्वोच्च होना चाहिए। यही इस पूरे राजनीतिक घटनाक्रम का सबसे बड़ा संदेश और सबसे महत्वपूर्ण सबक है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)